धूमिल

धूमिल का जन्म 9 नवम्बर, 1936 ई में दोपहर के समय वाराणसी के करीब 'खेवली' नामक गाँव में हुआ। धूमिल के पिता का नाम शिवनायक पाण्डेय और माता का नाम 'रंजवती देवि। धूमिल का नाम 'सुदामा प्रसाद पाण्डेय' है।

धूमिल के पिता की मृत्यु की ग्यारह मास पाश्चात धूमिल जब तेरह वर्ष की अवस्था में थे उनका विवाह उनका विवाह 'महादेवि' के साथ संपन्न हुआ।

10 फरवरी, 1975 ई में उनकी मृत्यु हो गई।

धुमिल के काव्य का परिचय

धुमिल के अबतक तीन काव्यसंग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

1) संसद से सड़क तक (1972)
2) कल सुनना मूझे (1977)
3) सुदामा पाण्डे का प्रजातंत्र (1984)

इन तीनों काव्य संग्रहों में कुल 122 कविताओं का संकलन हुआ है। धूमिल की हर कविता। किसी न किसी महत्वपूर्ण उद्देश्य को पाठकों के सामने प्रस्तुत करती है। प्रत्येक कविता को पाठकों के सामने प्रस्तुत करती है। प्रत्येक कविता का हर (उद्देश्यपूर्ण) शब्द उद्देश्य पूर्ण और सार्थक है।

Scanned with OKEN Scanner

धूमिल की कविता लोहे का स्वाद

लोहे का स्वाद कविता के कवि शुदाम प्रसाद पाण्डेय

शब्द किस तरह
कविता बनते हैं

इसे देखो
अक्षरों के बीच गिरे हुए
आदमी को पढ़ो
क्या तुमने सुना कि यह
लोहे कि आवाज है या
मिट्टी में गिरे हुए खून
का रंग।

लोहे का स्वाद
लोहार से मत पूछो
उस घोड़े से पूछो
जिसके मुँह में लगाम है।

प्रस्तुत कविता में कवि सुधाम प्रसाद धूमिल जी द्वारा रचित लोहे का स्वाद कविता में वर्तमान शोषण व्यवस्था की पीड़ा का बयान किया गया है।

Scanned with OKEN Scanner

इसमें कवि कहता है कि हे मानव यदि तुम यह जानना चाहते हो कि कवि किस प्रकार शब्दों से कविताएँ रचते हैं, तो उस आम आदमी के जीवन का अध्ययन करो जिसके आधार पर कविताएँ रची जाती है। उस आदमी के जीवन में तुम देखोगे कि या तो वहाँ घोर परिश्रम कि कहानि सुनाई देगी या उनके भयंकर शोषण की गाथा सुनाई देगी। (शोषण की पिड़ा को सहने के लिए) शोषण की पिड़ा का असली अनुभव जानना चाहते हो शोषकों से मत पूछों बल्की शोषण की पिड़ा को सहने के लिए मजबूर दलितों से पुछो। वे ही तुम्हें असली शोषण की पिड़ा बतलायेंगे। क्यों कि उन्होंने उनका स्वाद लिया है।

इस कविता का सौन्दर्य प्रतिको के कुशल सौन्दर्य में हैं। कवि ने प्रत्येक बात प्रतिकों और संकेतो में व्यक्त किया है। ये संकेत अत्यन्त सशक्त हैं। अक्षरों के बीच गिरा हुवा आदमी आम आदमि है।

Scanned with OKEN Scanner

लोहे की आवाज मेहनतकाश का श्रम है। मिट्टे में मिरे हुए खून का रंग। शोषण का आतंक है। लोहे का स्वाद शोषण की पिड़ा हैं। लोहार शोषक है। घोड़ा और लगाम क्रमशः शोषीत और अंकुश है। इस प्रतिकों से शोषण व्यवस्था की पीड़ा साकार हो उठी है।

लोहे का स्वाद कविता शोषीतों के प्रति सहानुभूति प्रकट कराती है। कवि के अनुसार आज शोषीत मजदूर कानून, नियम और मालिको के जादू में जकड़ा हुवा है। वह चाहते हुए भि अपने स्थिती में सुधार नहीं ला सकता है। वह सदा शोषण के आतंक और कठोर मेहनत में पिसता रहता है। उसकी पिड़ा को वहि जान सकता है, शोषक नहीं। कवि का आशाय यह है कि उसके पिड़ा को समझ कर उसे दूर करने का यत्न करना चाहिए।

Scanned with OKEN Scanner

कवि के अनुसार, जब जीवन का गहरा दर्द सामने आता है, शोषितों की पीड़ा सामने आती है, तो कवि के शब्द कविता रूप में प्रकट हो जाते हैं।

कवि ने दलितों की तुलना उस घोड़े से कि है जिसके मुह में लगाम है। यह इसलिए, क्यों की शोषीतों को बिना बोले, चुपचाप शोषकों के आदेशों और अंकुशों को सहकर शोषण की पिड़ा सहानि पड़ती है।

कवि कहता है कि दर्द की अनुभूति दर्द भोगने वाले को होति है, दर्द देनेवाले को नहीं। लोहार दर्द देनेवाला है, जबकी घोड़ा उस लोहे का दर्द अनुभव करता है। अतः लोहे का स्वाद घोड़े से पुछना चाहिए, लोहार से नहीं।

लोहे का स्वाद और घोड़े के लगाम में संबंध स्थापित करके कवि ने यह कहा है कि शोषण का असलि दर्द उसे भोगने वाले शोषीत को होता है, दर्द देने वाले शोषक को नहीं।

Scanned with OKEN Scanner

लोहे का स्वाद लोहार से मत पूछो, उस घोड़े से पूछो
जिसके मुह में लगाम है। समकालीन युग के
जनकवि सुदाम प्रसाद पाण्डेय धूमिल गाँव की
माटी से कविता और भाषा सीखे इसलीए उन्होंने
सत्ता के दुकमारों द्वारा गरीबों की दि जा रही
यातनाओं को करीब से देखा। यह बातें
आर्टजनल विकास क्षेत्र के।

उन्होंने कहा कि हमारे देश के तमाम कवियों
एवं रचनाकारों ने अपने कविता और रचना
कठोर शब्द में लिखकर सिर्फ उनको समझानेकी
कोशिश कि जो गरीबों पर जुल्म ढाल्ते थे
लौहे के स्वाद शोषण की पीड़ा है, लोहार
शोषक है, घोड़ा और लगाम क्रमशः शोषीत
और अंकुश है।

Scanned with OKEN Scanner

सभी कविताओं में धूमिल ने तात्कालीन सामाजिक और राजनीतिक का परिचय करवाती है। उनकी कविताओं में शहर, देहात और करम, राजनीतिक

* आस्तिक - अनास्तीक
* असामाजिकता - सामाजिकता
* अहिंसा - हिंसा
* आशा - निराशा

मानव की जीवन के सभी चित्रण मिलता है। इनके कविताओं में पढ़ने के बाद ऐसे लगता है कि अपना ही चित्रण खुद देख रहे हो लगता है।

धूमिल के कविताओं में कवी उन लोगों का तलाशता है, जो देश में जंगल में भेड़ियों की तरह रह रहे हैं। और ग्रामीण उन्हीं के जंजाल में लगे है। धूमिल की कविताओं में घर-घर की समस्या - पारिवारिक और असंगतीयां, अंधविश्वास आदि कविताओं लीखें है। कविताओं का द्वारा धूमिल

धूमिल की कविताओं में ऐसे लगता है की ठहर हुआ आदम को हरकत में लाके ही दम लेती है।

* लोहे का स्वाद *

लोहार से मत पूछो उस घोड़े से पूछो जिसके मुँह में लगाम है। इन दोनों जगहों पर धूमिल ने कोई सवाल नहीं किया बल्कि अपने अनुभूत विचार को मजबूत बयान दिया है। पहले में सोच में आदत बन चुकी हत्या है। तो दूसरे में यह बात कि यातना की यंत्रणा का अहसास यातना के चित्रकार से ज्यादा यातना के शिकार को होता है। यहाँ

कवि अपने वैचारिक अपलब्धि के स्तर पर है। दोनों काव्यांशों हैं 'कविता' है दूसरे में इन चार पंक्तियों के ऊपर यह जिक्र है कि कविता किस तरह बनती है। मतलब धूमिल की कविताई का उत्स और अस्त दोनों है 'कविता है कविता एक जिल्द-सी होती है। उतर जाय तो कवि नजर आता है। कवि के भीतर कविता पकती है।

उसकी उम्र की तरह और किसी क्षण कवि के कण्ठ से फूट पड़ती है या उसकी लेखनी से सरक आती है। धूमिल की फितरत और असलियत उनकी कविता के खोल में बाकायदा सुरक्षित है। जिसने जितना खोला उसे उतना नजर आया। उनकी कविता की बारीकियों को ढूँढने के लिए दो चाभियों का इस्तेमाल हो सकता है - पहला है 'प्रश्न' और दूसरा 'वक्तव्य'।

गौरतलब है कि उनके प्रश्न और वाच्यत्व कहीं बाहर नहीं बल्कि कविता के भीतर ही मौजूद है। अंतःआश्रय की तरह। उनके कुछ सवालों को देखिए—

* जानवर बनने के लिए कितने सब्र की जरूरत होती है
* क्या आज़ादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है जिन्हें एक पहिया ढोता है।
या इसका कोई खास मतलब होता है।

* अपने सचमुच सही लिखते हैं। अखबार

* अपने बचाव के लिए
खुद के खिलाफ हो जाने के सिवा
दूसरा रास्ता क्या है।

* क्या सचमुच सही लिखते हैं। अखबार

* लोहे की छोटी-सी दुकान में बैठा हुआ आदमी
मिट्टी क्यों हो गया है।

इन सवालों को देखकर उनका नजरिया पकड़ में आता है। ये सवाल आदमी, देश, सत्ता और स्वार्थ से जुड़े हैं। ये कभी होले से दृश्य या झटके से झकझोरते हुए उन मुद्दों की ओर इशारा करते हैं। जिसपर बाद कानून में लागू करवाते हैं। क्योंकि ये हालात के नकलीपन की पोल खोलते हैं। उनके प्रश्न को किस्म

एक अनुत्तरित और दूसरा उत्तरित। अनुत्तरित प्रश्न में कवि बिना कोई जवाब दिए सवालों को सुलता हुआ।

सो छोड देते हैं। यह कविता के व्यंग्य का साकार करने की एक शैली है। ऐसे सवाल कमर सीधा करने के लिए मजबूर करते हैं। सुदामा पाण्डे का प्रजातंत्र में जनतंत्र एक हत्या संदर्भ नामक कविता में उन्होंने सामाजिक विसंगतियों की घटनाओं को सामने रखकर बार-बार यह कौंधता हुआ सवाल किया है कि उस वक्त जनतंत्र किधर था

धूमिल ने दूसरे तरह का उत्तरित सवाल भी किया जिसमें सवाल उसका उत्तर दिया है। ऐसे सवालों बडे विचारोत्तेजक है जिसमें जवाब कोई बिम्ब मुहावरा या मिसाल है। ऐसे।

में सवाल और जवाब दोनों प्रत्यक्ष के बजाय किसी परोक्ष दर्शन कविता की पंक्तियाँ द्रष्टव्य है

भूख कौन उपजाता है
उस चालाक आदमी ने मेरी बात का उत्तर नहीं दिया
उसने गलियों और सड़कों और घरों में बाढ की तरह फैले हुए बच्चों की ओर इशारा किया
और हँसने लगा।

सुदामा पाण्डेय धूमिल

जन्म : 9 नवम्बर 1936 → (उन्नीसौ छत्तीस)
जन्म स्थान : वाराणसी के पास खेवली गांव
पिता : शिवनायक पांडे / माता का नाम → रंजवती देवी
मृत्यु : 10 फरवरी 1975 (उन्नीसौ पचहत्तर)
आयु : 38 वर्ष अल्पायु में ही ब्रेन ट्यूमर से उनकी मृत्यु हो गई
काव्य संग्रह : संसद से सड़क तक, कल सुनना मुझे, सुदामा -पाण्डेय का प्रजातंत्र

बीस साल बाद

* स्वतंत्रता के बाद भारत देश की किस तरह स्थिति थी किस तरह का वातावरण था। किस तरह हम आगे बढ़ चुके थे। जीवन में या इस दुनिया के इस पूरे जो चलने वाली दुनिया इसमे हम कहा तक बढ़ चुके थे। इसी के ऊपर वहा बीस साल बाद कहकर शीर्षक से कविता लिखते है आजादी के बीस -साल बाद जो जो हमारे नेता लोगों ने मतलब हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने जो-जो सपने देखे थे बीस साल बाद मतलब जो स्वतंत्र होने से पूर्व भारत ऐसा होगा वैसा होगा स्वतंत्रता प्राप्ती के बाद हम ब्रिटिशों से मुक्ति पाने के बाद आजादी पाने के बाद हमारा देश किस तरह किस तेजी से आगे बढ़ेगा यह सोचकर रखा है हमारी आजादी दिलानेवाली नेताओं ने कितना संघर्ष किया है उसके बीस साल बाद असल मे चित्रण क्या है सच में जो दृश्य है बीस साल बाद कहाँ तक हम पहुँचे है। क्या सच में हमने तरक्की कि है या अभिवृद्धि की है सब बातो को बहुत ही व्यंग्य रूप से भी कह सकते है और बहुत ही वेदना के साथ यह पर कवि बताने का प्रयत्न करते है तो चलिए कविता प्रारंभ करते है।

कवि कहते है आज भारत स्वतंत्र होकर आज मतलब उस समय जब उन्होंने यह रचना कविता रचना की है बीस साल बाद मेरे चेहरे मे वे आँखे लौट आयी है मै अपने आँखे खोलकर देखता हूँ कि भारत कहाँ तक पहुँचा है। कहा तक अभिवृद्धि कर चुका है। कहा तक आगे बढ़ चुका है। बीस साल बाद वह देखने जो आँखे है जो मुझमे लौट आई है

(2) आज भारत स्वतंत्र होने के बाद आज मतलब उस समय जो कविता रचना की है। बीस साल बाद वे आँखे लौट आये है मै आँखे खोलकर देखता हूँ की भारत कहा तक पहुँचा है। वो देखने के लिए मुझमे आँखे लौट आयी

(2) जिनसे मैंने → कहते है इस देश मे आजादी के बाद ए जो बड़े-बड़े शहर है ए जो देश है पहले ए देश हुआ करते थे। आज ए जंगल के समान दिख रहा है हमने सोचा था एक अद्भुत बहुत ही प्रीय बहुत ही लुभावना देश बनेगा जिससे सब लोग तरक्की करेंगे जाति, रंग, भेद, भाव के बिना सभी लोग तरक्की करेंगे मगर आज बीस साल बाद मैंने उन नजरिया भी उन आँखों से जब देखा। यहाँ सारे तरफ मैंने क्या देखा है। जंगल देखा है। जंगल दिख रहा है सब तरफ इंसानियत मानवता तो छोड़िए सब तरफ मुझे जंगल दिख रहा है।

(3) और जहाँ हर चेतावनी —— कोई भी चीज करने का एक हद होता है एक लीमिट होता है कहते है ना वह लिमिट भी हम पार कर चुके है। हम जंगली वन में इतनी आगे जा चुके है हर खतरे को टलने के बाद

हर एक लीमिट को टलने के बाद एक खतरे की घुण्टी
कहते है ना खतरे की ~~रेखा~~ सीमा होती है उसको भी
हम पार करकर आगे जा चुके है। एक हरी अँ
बनकर रह गए है

(5) क्योंकि आजकल ---- ए जो अराज्यकता भारत देश मे
फैली है ए जो अन्याय हो रहा है बीस साल बाद भी
जाती के ऊपर धर्म के ऊपर रंग के ऊपर किया जा
रहा है ए अराजकता है यह आजकल जो फैली
हुवी है इसके मौसम का मिजाज़

दोपहर हो चुकी ---- अर्थात देखिए जब
भारत को स्वतंत्रता मिली 15 अगस्त 1947 तब वह भोर
हुवा था अब दोपहर हो चुकी है मतलब बहोत
आगे हम आ चुके है हमने बीस साल बाद
गुज़ार दिए है। हर तरफ ताले लटक रहे है
मतलब लोगों के जबान के ऊपर ताले लटक
गये है। कोई अपना मूँह खोलना नही चाहता
हर कोई सरकार की ~~झू~~ झूटी-मूटी तारीफ करने
में लगा है। ~~कोई~~

हवा मे फड़फड़ाते ---- राजनेता लोगों को
गाय कहकर पूज रहे थे। देश का नाम रोशन
करेंगे देश को एक पटरी के ऊपर लायेंगे देश
को बहुत तेजी से आगे बढ़ाएँगे ऐ सोचकर हमने
इन्हें लाया था। मगर इन्होंने हमारा जो नक्शा है
हिंदुस्तान का ~~का~~ ~~का~~ नक्शा है उसके ऊपर
गौबर कर दिया है मतलब खराब कर दिया गंदगी
फैला दिया। अराजकता फैला दिया इस तरह
कवि गहरी चोट करते है राजनेताओं पर

मगर यह कथवस्त्र ---- ये समय किसी Evaluate करने का नहीं है आँकने का समय नहीं है किसका मूल्य निरूपण करने का समय नहीं है और न यहाँ पूछने का संत और सिपाई मे सबसे बड़ा दुर्भाग्य कौन है। संत आशाराम बापू तो इस तरह के संत केवल ये दिखावे के लिए ऊपर से ही संत बने हुवे है अंदर से ये शैतान है। सिपाईयों का दुर्भाग्य क्यों है → सिपाईयों का क्या है राजनेता लोग अपनी पावर के अंदर अपने रोम मे अपने हाथों को बाँध दिया है समाज के अंदर कोई बुरा काम होरा है कोई गलत चीज़ होरी है कोई दंगा होरा है तो वह जाकर उसे दबाने का या उसे मिटाने का प्रयत्न करते है उसको सुलझाने के प्रयत्न करते है मगर राजनेता लोग अपनी खुद की अंदर की षड्यंत्र के कारण दंगा होने देते है और वहाँ पर सीपाई यों का हाथों को बांध देते है तुम कबूल मत लो।

आह! वापस लौटकर ---- कवि कहते है कि अगर से मै वापस लौटकर देखू बीस साल के बाद मै लौटकर देखू तो ए छूटे हुवे जो दंगे मे छूटे हुवे जूतों मे वापस पैर डालकर जाने का वक्त नहीं है देखिए दंगे मे जो कोई व्यक्ति के गिरफ्तार होता है जो वहाँ से भाग जाता है वहीं मेरे जूते उस समय छूट गये थे मैं छोड़ गया था वो वापीस आकर जूते कलेक्ट नहीं करता। यही वक्त भी नहीं है।

धूमिल - परिचय

जीवन परिचय :→

धूमिल ने स्वयं अपने जीवन से सम्बन्धित पक्षों पर प्रकाश नहीं डाला। उन्होंने कोई डायरी, दैनिक जीवन से सम्बन्धित घटनाओं का ब्यौरा, अन्य लेखकों से हुये पत्राचार आदि का कोई विवरण नहीं रखा, इसी कारण उनके जीवन से जुड़ी घटनाओं को उनके परिवार जनों से प्राप्त सामग्री के आधार ही स्पष्ट किया जा सकता है। उनके कुछ मित्र, लेखक, अनुज, कन्हैया पाण्डेय आदि जनों से उनके जीवन सम्बन्धी पक्षों प्रकाश डाला गया है जिसके आधार पर उनके जीवन परिचय को प्रस्तुत किया जा स

जन्म :→

धूमिल का जन्म 9 नवम्बर 1936 ई. मे दोपहर के समय वाराणसी के करीब खेवली नामक ग्राम मे पं. शिवनायक पाण्डेय के घर एक सामान्य कृषक परिवार मे हुआ। धूमिल का नाम 'सुदामा प्रसाद पाण्डेय' है। पिता शिवनायक पाण्डेय किसी दुकान मे नौकरी कर अपना

माता - पिता :→
धूमिल के पिता का नाम शिवनायक पाण्डेय था, जो अपना जीवन अत्यंत कठिनाइयों मे बिता रहे थे। वे किसी दुकान मे नौकरी करते थे, उनके बारे में डॉ चमनलाल गुप्ता लिखते हैं- "शिवनायक पाण्डेय का 'सुधिना साहू की दुकान' से संम्बन्ध रहा था सम्भवतः ये जयशंकर प्रसाद जी के पिता के यहाँ मुनीम रहे थे। बाद में वे अपने चारों भाइयों सहित कृषि-कर्म में ही लग गये थे। "धूमिल की माता का नाम 'रजवंती देवी' था, वह धार्मिक विचारों की महिला थीं। पिता उदार तथा क्रोधी स्वभाव के थे। पिता की मृत्यु के पश्चात धूमिल ने इस संयुक्त परिवार को एक बनाए रखने के लिए हर प्रकार की कठिनाइयों को सहा।

Scanned with OKEN Scanner

Page No :
Date : / / 20

चार भाइयों मे धूमिल जेष्ठ पुत्र होने के नाते घर की पूरी जिम्मेदारी इन्हीं पर थी।

जाति एवं कुल :- धूमिल का जन्म उच्च ब्राह्मण कुल मे हुआ था। उनके पूर्वज सम्भ्रांत एवं प्रतिष्ठित थे। धूमिल पर बचपन मे घर के धार्मिक संस्कार हुये लेकिन आगे जीवन मे उन्होंने धर्म के विकृत रूप को देखा और इन्हें धर्म, जाति, कर्मकांड आदि से विरक्ति हुई। धूमिल जाति एवं कुल से मुक्त ही कु

मोचीराम

धूमिल ने कविता के लिए एकदम अछूते, उपेक्षित और ताजा विषय चुने। मोचीराम इस प्रकार के विषयों मे महत्वपूर्ण है। मोचीराम अपना काम पूरी ईमानदारी, निष्ठा और आत्मीयता के साथ करनेवाला आम आदमी है। वह मेहनतकश सर्वहारा है जो कुआँ खोदकर पानी पीता है। वह अपने व्यवसाय को सबसे बढ़कर मानता है। 'कर्म ही पूजा' के सिद्धान्त मे वह पूरा यकीन रखता है। वह अपने ग्राहकों को समदृष्टि से देखता है, वह जाती या वर्ग के आधार पर किसी को बड़ा या छोटा नहीं मानता। वह जूतों की मरम्मत के बहाने समाज और व्यवस्था की मरम्मत करना चाहता है। वह मानता है कि जिस प्रकार हरेक जोड़ी जूते को मरम्मत की जरूरत है उसी प्रकार हर आदमी को सुधार की जरूरत है।

बाबूजी! सच कहूँ - मेरी निगाह में
न कोई छोटा है
न कोई बड़ा है
मेरे लिए, हर एक आदमी एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने मरम्मत के लिए खड़ा है

मोचीराम मानता है कि आज आदमी छोटा होता जा रहा है। वह आदमी के बीच वर्गभेद पैदा करता है। किन्तु मोचीराम इस वर्गभेद को अस्वीकार करके एक नए समाजवादी की

प्रस्तावना करता है। वह व्यवस्था में मौजूद अमानवीकरण के खिलाफ इन्सानियत के एहसास को बचाए रखने की वकालत करता है वह व्यवस्था में मौजूद मानता है कि व्यवस्था या जूते को ठीक करने की प्रक्रिया में सबसे ज्यादा चोट आम आदमी को सहनी पड़ती है। वह पूरी संवेदनशीलता और शिद्दत के साथ आम आदमी के दर्द को समझने और सम्प्रेषित करने की बात करता है -

फिर भी मुझे ख्याल रहता है
कि पेशेवर हाथों और फटे हुए जूतों के बीच
कहीं-न कहीं एक अदद आदमी है
जिस पर टाँके पड़ते हैं,
जो जूते से झाँकती हुई उँगली की चोट
छाती पर हथौड़े की तरह सहता है

सम्बोधन शैली में लिखी गई इस कविता में कवि धूमिल मोचीराम के माध्यम से समाज के पूरे ढाँचे की जाँच-पड़ताल करते हैं। समाज में मौजूद गैर-बराबरी और नाइन्साफी को उभारकर उस पर चोट करते हैं। वे बताते हैं कि अलग-अलग हैसियत का आदमी, अलग-अलग किस्म के जूते पहनता है। एक तरफ श्रमजीवी वर्ग है, जिसके जूते में चकतियाँ-ही चकतियाँ हैं।

एक जूता और है जिससे पैर को
'बाँधकर' एक आदमी निकला है
सैर को
न वह अक्लमन्द है
न वक्त का पाबन्द है
उसकी आँखों में लालच है
हाथों में घड़ी है
उसे कहीं जाना नहीं है
मगर चेहरे पर
बड़ी हड़बड़ी है
वह कोई बनिया है
या बिसाती है
मगर रोब ऐसा कि हिटलर का नाती है

श्रमजीवी और 'परजीवी को आमने - सामने खड़ा करके धूमिल व्यवस्था की उस विसंगति को रेखांकित करना चाहते हैं जो सही आदमी को असफल और अभावग्रस्त बनाती है और गलत आदमी को सफल और सम्पन्न बनाती है। धूमिल इस विसंगति का सख्त विरोध करते हैं।

मोचीराम के माध्यम से मेहनतकश आदमी में अन्तर्निहित मानवीयता और संवेदनशीलता को अभिव्यक्त करते हुए धूमिल बताते है कि व्यवस्था के व्यवस्था के विरोधाभास पीड़ाजनक है। मोचीराम अपने निजी (पेशागत) हित से अलग हटकर व्यापक मानवीय दृष्टि से घटनाओं, व्यक्तियों

और व्यवस्था का विश्लेषण करता है। व्यवस्था में मौजूद अन्याय, असमानता और अराजकता लगातार उसकी छाती पर हथौड़े की तरह चोट करते हैं। वह मानता है कि अगर व्यक्ति का जीवन प्रमाणिक नहीं है तो धरम-करम और दलालों में कोई खास फर्क नहीं है-

और बाबूजी! असल बात तो यह है कि जिन्दा
रहने के पीछे
अगर सही तर्क नहीं है
तो रामनामी बेचकर या
दलाली करके रोज़ी कमाने में
कोई फर्क नहीं है

मानवीय संवेदना ही व्यक्ति को जीने का सही तर्क और तरीका देती है। मानवीय संवेदना के अभाव में आदमी अपनी अलग पहचान खोकर स्वचालित भीड़ का हिस्सा बन जाता है।

Scanned with OKEN Scanner

पटकथा

धूमिल की यह लम्बी कविता स्वातन्त्र्योत्तर भारत में घटित प्रहसन की पटकथा है। यह कविता स्वाधीनता आन्दोलन के मूल्यों, आदर्शों, उम्मीदों और सपनों के साथ हमारे राजनेताओं ने जो विश्वासघात किया, उसकी पूरी व्यथा-कथा है। जनतन्त्र के नाम पर जो प्रहसन आज तक चल रहा है उसकी पटकथा धूमिल अपनी इस लम्बी कविता में लिखते हैं।

व्यवस्था के प्रलोभनों और तिलिस्म से बाहर आकर कवि आमजन से रु-ब-रु होते हैं। वे आमजनों के लिए आजादी के जो मायने, मूल्य, वायदे और सपने थे उनको समझते और पहचानते हैं। आजादी को लेकर उनके मन में उत्साह और उल्लास के भाव हैं। वे आमजन को आजादी की बधाई देते हैं। धूमिल को खुद से और प्रकारान्तर से बुद्धिजीवी वर्ग से कोफ्त होती है।

अपने अन्दर राष्ट्र निर्माण में भागीदारी हेतु जरूरी जवान खून होने के बावजूद वे सुविधा और शान्ति का सुरक्षित जीवन चुनते हैं।

मैंने इन्तज़ार किया
अब कोई बच्चा
भूखा रहकर स्कूल नहीं जाएगा
अब कोई छत बारिश में
नहीं टपकेगी।

मैं इन्तजार करता रहा...
इन्तजार करता रहा...
इन्तजार करता रहा...
जनतन्त्र, त्याग, स्वतंत्रता...
संस्कृति, शान्ति, मनुष्यता...
ये सारे शब्द थे
सुनहरे वादे थे
खुश-फहम इरादे थे

ऐसे नाउम्मीद-नामुराद समय में बौद्ध धर्म के सबसे बड़े अनुयायी देश चीन से शान्ति का जाप करते मजबूर, कमजोर और बीमार भारत को सरेआम पीटा। कहीं कोई विरोध नहीं हुआ क्योंकि हिमाचल से लेकर हिन्द महासागर तक हमारा देश ठण्डी राख बना हुआ था। वह नफरत, साजिश और अन्धेरगर्दी का शिकार था। जनता जनता नहीं थी, वह एक ऐसी भेड़ थी जो दूसरों द्वारा पेट भरने और बदन गरम रखने के लिए इस्तेमाल की जा रही थी। इस भेड़ को बार-बार जनतन्त्र की घुट्टी पिलाई जा रही थी और बताया जा रहा था कि हमारे देश में

Scanned with OKEN Scanner

भेड़िए और भेड़ को, घोड़े और घास को जिन्दा रहने के लिए एक जैसी छूट है। यह अपने समय का सबसे बड़ा झूठ था क्योंकि इस देश में कानून एक ही चलता था। जंगल का कानून। छूट एक ही थी, ताकतवर को लूट की छूट। वास्तव में हमारे यहाँ जनतन्त्र एक तमाशे की तरह था जिसमें जनता को बार-बार भरमाया और बरगलाया जा रहा था —

उसको समझा दिया गया है कि यहाँ
ऐसा जनतन्त्र है जिसमें
जिन्दा रहने के लिए
घोड़े और घास को
एक-जैसी छूट है

दरअस्ल, अपने यहाँ जनतन्त्र
एक ऐसा तमाशा है
जिसकी जान
मदारी की भाषा है।

इस जनतन्त्र में अमीरों के बीच में गरीब होना सबसे बड़ी गाली थी। गरीब आदमी अपमानित, उपीड़ित, तिरस्कृत और बहिष्कृत था जबकि सच्चाई यह थी कि अमीरों की अमीरी गरीबों के परिश्रम की कमाई थी।

Scanned with OKEN Scanner

मैं रोज देखता हूँ कि व्यवस्था की मशीन का
एक पुर्जा गरम होकर
अलग छिटक गया है और
ठण्डा होते ही
फिर कुर्सी से चिपक गया है
उसमें न हया है
न दया है
नहीं - अपना कोई हमदर्द
यहाँ नहीं है। मैंने एक-एक को
परख लिया है।
मैंने हरेक को आवाज़ दी है
हरेक का दरवाजा खटखटाया है
मगर बेकार... मैंने जिसकी पूँछ
उठाई है उसको मादा
पाया है।

भारत देश में समाजवाद भी एक ऐसा खोखला नारा बन गया है जिससे कोई उम्मीद नहीं की जा सकती। जो गरीब है वह दया का पात्र और लाचार है। जो इस गरीबी और भूख के खिलाफ मुट्ठी तानता है, अपराधी है। संसद को देश की धड़कन और जनता का दर्पण कहा जाता है, पर सच्चाई यह है कि संसद तेली की वह घानी है, जिसमें बूँद भर तेल और पूरा पानी है।